प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय : बिलासपुर

रिट याचिका (एस) क्रमांक 4438/2010

याचिकाकर्ता गौरपद मिर्घा

विरुद्ध

उत्तरवादीगण छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

आदेशों उद्घोषणा हेतु दिनांक 21 जनवरी, 2013 को सूचीबद्ध करें।

हस्ताक्षरित/-

सतीश के. अग्निहोत्री

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय : बिलासपुर

रिट याचिका (एस) क्रमांक 4438/2010

याचिकाकर्ता गौरपद मिर्घा

विरुद्ध

उत्तरवादीगण छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 एवं 227 के अधीन रिट याचिका)

एकल पीठ : माननीय श्री सतीश के. अग्निहोत्री, न्यायाधीश

उपस्थित : श्री पराग कोटेचा, अधिवक्ता – याचिकाकर्ता की ओर से।

श्री गैरी मुखोपाध्याय, पैनल अधिवक्ता – राज्य की ओर से।

श्री ए.एस. कछवाहा, अधिवक्ता – उत्तरवादी क्रमांक 3 की ओर से।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(दिनांक 21 जनवरी, 2013 को उद्घोषित)

1. याचिकाकर्ता को आरोपपत्र तामील किया गया था, जिसमें यह आरोप था कि उसने वर्ष 2006 के तेंदूपत्ता संकलन सत्र के दौरान, जब वह प्राथमिक वन उपज सहकारी समिति, चारगांव एवं मानहाकाल (संक्षेप में "समिति") में नोडल अधिकारी के रूप में कार्यरत था, कुछ वित्तीय अनियमितताएँ कीं। संबंधित समय में याचिकाकर्ता का स्थायी पद वनपाल था।
2. उप मंडलीय वन अधिकारी, ईस्ट कापसी सह जाँच अधिकारी ने विस्तृत जांच की तथा दिनांक 15-05-2009 को अपनी प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। जांच प्रतिवेदन में जाँच अधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अभियोजन यह स्थापित करने में असफल रहा कि संकलित सामग्री के संबंध में श्रम भुगतान एवं फड़मुंशी कमीशन का सही ढंग से भुगतान नहीं किया गया था। तेंदूपत्ता संकलन के लिए क्रेता द्वारा भुगतान किया गया था, तथापि पूर्ण बोनस का भुगतान नहीं किया गया। यह माना गया कि आरोप क्रमांक 1 आंशिक रूप से सिद्ध हुआ है। जाँच अधिकारी ने आगे यह भी अभिमत व्यक्त किया कि शासन/संघ (फेडरेशन) तथा तेंदूपत्ता संकलकों को हुए नुकसान के लिए समिति का क्रेता पूर्णतः उत्तरदायी था। समिति, चारगांव

एवं मानहाकाल के संबंध में यह पाया गया कि क्रेताओं ने शासकीय कर्मचारियों के साथ मिलीभगत कर हेरफेर एवं वित्तीय अनियमितताएँ |

3. अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने यह मानते हुए कि आरोप क्रमांक 1 आंशिक रूप से सिद्ध हुआ है, दिनांक 04-07-2009 को याचिकाकर्ता को एक नोटिस (अनुलग्नक–P/1) जारी किया, जिसमें उसे जांच प्रतिवेदन पर अपना उत्तर प्रस्तुत करने हेतु कहा गया। तत्पश्चात, दिनांक 19-08-2009 के आदेश (अनुलग्नक–P/2) द्वारा अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता को उत्तरदायी ठहराते हुए 5 वेतनवृद्धियों को बिना संचयी प्रभाव के रोके जाने का आदेश पारित किया तथा याचिकाकर्ता से ₹7,17,661/- की राशि वसूली हेतु निर्देश दिया, जिसे 95 किस्तों में ₹7,500/- प्रति माह की दर से तथा शेष ₹5,161/- 96वीं किस्त में जमा कराया जाना निर्धारित किया गया।

4. उक्त के विरुद्ध, दिनांक 18-9-2009 को (अनुलग्नक – P/3) याचिकाकर्ता द्वारा अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष अपील प्रस्तुत की गई। उक्त अपील पर दिनांक 23-3-2010 (अनुलग्नक – P/4) के आदेश द्वारा अपीलीय प्राधिकारी ने 5 वेतनवृद्धियों को रोके जाने के दंड को घटाकर 3 वेतनवृद्धियों को बिना संचयी प्रभाव के रोके जाने का दंड कर दिया तथा रुपये 7,17,661/- की वसूली के संबंध में आदेश को यथावत् बनाए रखा। अतः, यह याचिका प्रस्तुत की गई है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

5. श्री कोटेचा, याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया कि जब अनुशासनिक प्राधिकारी जांच अधिकारी के निष्कर्ष से असहमत होकर स्वतंत्र निर्णय लेना चाहता है, तब याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस प्रदान किया जाना आवश्यक है। चूँकि कारण बताओ नोटिस प्रदान नहीं की गई, अतः संपूर्ण कार्यवाही विधि विरुद्ध होकर दूषित हो गई है और अपास्त किए जाने योग्य है। श्री कोटेचा ने इस न्यायालय के निर्णय रामाधार भास्कर बनाम मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य1 का अवलंब लिया है।।

6. दूसरी ओर, श्री मुखोपाध्याय, राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान पैनल अधिवक्ता तथा श्री कछवाहा, उत्तरवादी क्रमांक 3 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने, आक्षेपित आदेशों का समर्थन करते हुए यह निवेदन किया कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच अधिकारी के निष्कर्ष से असहमति व्यक्त नहीं की है और अभिलेखित निष्कर्ष के आधार पर यह स्पष्ट रूप से दर्ज किया गया है कि क्रेता ने शासकीय कर्मचारियों के साथ मिलीभगत कर हेरफेर तथा वित्तीय अनियमितताएँ की हैं। यह भी अभिलिखित है कि आरोप क्रमांक 1 इस सीमा तक सिद्ध पाया गया है कि तेंदूपत्ता संग्राहकों को पूर्ण बोनस का भुगतान नहीं किया गया।

तदनुसार, आक्षेपित आदेश पारित किया गया।

7. पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुनकर तथा अभिवचनों एवं संलग्न अभिलेखों का परिशीलन करने पर यह पाया गया कि जांच अधिकारी ने विस्तृत जांच की, समस्त साक्षियों एवं दस्तावेजों का परीक्षण किया और तत्पश्चात इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि संबंधित समिति में तेंदूपत्ता संग्रहण के लिए श्रम भुगतान तथा फड़मुंशी कमीशन का समुचित भुगतान नहीं किया गया था; तथापि यह भी पाया गया कि उच्च अधिकारियों द्वारा स्वीकृत बोनस राशि का समुचित भुगतान नहीं किया गया। यह भी पाया गया कि प्रतिरक्षा, अर्थात् याचिकाकर्ता, यह स्थापित करने में असफल रहा कि उसने उच्च अधिकारियों द्वारा स्वीकृत संपूर्ण बोनस राशि का भुगतान किया था। अतः आरोप क्रमांक 1 आंशिक रूप से सिद्ध पाया गया तथा अंततः यह भी पाया गया कि शासकीय कर्मचारियों के साथ मिलीभगत कर क्रेता द्वारा हेरफेर किया गया, जिससे राज्य/संघ को लाखों रुपये की क्षति हुई। क्रेता द्वारा शासकीय कर्मचारियों के साथ मिलीभगत की गई। याचिकाकर्ता तेंदूपत्ता संग्रहण, धनराशि के वितरण तथा विशेष रूप से बोनस राशि के वितरण के लिए नोडल अधिकारी/समग्र प्रभारी के रूप में कार्यरत था

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

---

1. 2012(3) सीजीएलजी 62 (डीबी)

तथा यह उसका दायित्व था कि वह श्रम प्रभार, फड़मुंशी कमीशन एवं बोनस का पूर्ण भुगतान सुनिश्चित करे।

8. वस्तुतः, अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच प्रतिवेदन से असहमति व्यक्त नहीं की है तथा यह यथोचित रूप से माना है कि आरोप क्रमांक 1 आंशिक रूप से सिद्ध पाया गया है। अतः, याचिकाकर्ता का यह कथन कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच प्रतिवेदन से असहमति व्यक्त कर दंड अधिरोपित किया है, तथ्यों के विपरीत है।

9. प्राधिकारियों द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करने से पूर्व, याचिकाकर्ता को दिनांक 04-07-2009 को नोटिस जारी किया गया। याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 16-07-2009 को उत्तर भी प्रस्तुत किया गया (जैसा कि दिनांक 19-08-2009 के आदेश से, जो याचिका के पृष्ठ 22 पर उपलब्ध है, स्पष्ट है), किन्तु उक्त उत्तर की कोई प्रति याचिकाकर्ता द्वारा याचिका के साथ संलग्न नहीं की गई है।

10. यह कोई आपत्ति नहीं है कि जांच प्रक्रिया विकृत या अवैध है अथवा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन नहीं किया गया। यह भी परिलक्षित नहीं होता कि जांच की कार्यवाही में

कोई अवैधता थी अथवा याचिकाकर्ता को समुचित सुनवाई का पूर्ण अवसर प्रदान नहीं किया गया।

11. अभिलेख के परिशीलन से यह दर्शित होता है याचिकाकर्ता की सुनवाई का उचित अवसर देते हुए तथा दस्तावेज एवं साक्षियों का परीक्षण करने के बाद एक विस्तृत जांच की गई है। अतः, इस न्यायालय को जांच में तथा अनुशासनिक प्राधिकारी एवं अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों में कोई दोष या अवैधता परिलक्षित नहीं हुई है।

12. जी. आर. उरांव बनाम छत्तीसगढ़ राज्य एवं अन्य2 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अवलेकित किया है :

> 15. यह विधि का सुव्यवस्थित सिद्धांत है कि यदि निर्णय-लेने की प्रक्रिया में कोई अनियमितता या अवैधता नहीं है तथा निष्कर्ष भी अनुचित नहीं है, तो उच्च न्यायालय नियोक्ता द्वारा लिए गए निर्णय में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।
>
> 1. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मन मोहन नाथ सिन्हा, (2009) 8 SCC 310 में, जिसमें उच्च न्यायालय द्वारा प्राधिकारियों द्वारा पारित दण्डादेश को
>
> --------------------
>
> 2. 210(3) एम.पी.एच.टी. (सी.जी.)
>
> अभिखंडित कर दिया गया था, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया :
>
>> 14. विभागीय जांचों से संबंधित मामलों में न्यायिक पुनर्विलोकन का क्षेत्र इस न्यायालय के समक्ष आंध्र प्रदेश राज्य बनाम चित्रा वेंकट राव प्रकरण में विचारार्थ आया था तथा इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया : (SCC पृष्ठ 562-63, कंडिका 21 एवं 23-24)
>>
>> “21. ...... अनुच्छेद 226 के अधीन, लोक सेवक के विरुद्ध विभागीय जांच करने वाले प्राधिकारियों के निर्णय के संबंध में उच्च न्यायालय अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है। न्यायालय यह निर्धारित करने के लिए कि क्या जांच उस प्रयोजन के लिए सक्षम प्राधिकारी द्वारा तथा उस संबंध में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार की गई है, और क्या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं हुआ है।द्वितीयतः, जहाँ कुछ

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

साक्ष्य विद्यमान है, जिसे जांच करने के दायित्व से अभिप्राप्त प्राधिकारी ने स्वीकार किया है और जो साक्ष्य युक्तिसंगत रूप से इस निष्कर्ष का समर्थन कर सकता है कि अभियुक्त अधिकारी आरोप का दोषी है, वहाँ उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य नहीं है कि वह साक्ष्यों का पुनर्विलोकन करे और उन साक्ष्यों के आधार पर स्वतंत्र निष्कर्ष पर पहुँचे। उच्च न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है, जहाँ विभागीय प्राधिकारियों ने अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल या जांच की विधि निर्धारित करने वाले वैधानिक नियमों के उल्लंघन में की हो, अथवा जहाँ प्राधिकारियों ने साक्ष्यों तथा प्रकरण के गुण-दोष से असंबद्ध विचारों के आधार पर स्वयं को न्यायसंगत निर्णय तक पहुँचने से वंचित कर लिया हो, अथवा अप्रासंगिक विचारों से प्रभावित होकर निष्कर्ष निकाला हो, अथवा जहाँ निष्कर्ष अपने स्वरूप में इतना मनमाना एवं अनियमित हो कि कोई भी विवेकशील व्यक्ति ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता था। यदि जांच अन्यथा विधिवत् संपन्न की गई है, तो विभागीय प्राधिकारी तथ्यों के एकमात्र निर्णायक होते हैं, और यदि ऐसा कोई विधिक साक्ष्य उपलब्ध है जिस पर उनके निष्कर्ष आधारित हो सकते हैं, तो उस साक्ष्य की पर्याप्तता या विश्वसनीयता का प्रश्न ऐसा नहीं है जिसे अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया जा सके।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

23. अनुच्छेद 226 के अंतर्गत उत्प्रेषण की रिट जारी करने का अधिकार पर्यवेक्षी अधिकारिता है।न्यायालय इसका प्रयोग अपीलीय न्यायालय के रूप में नहीं करता है। निम्न न्यायालय या अधिकरण द्वारा साक्ष्यों के मूल्यांकन के परिणामस्वरूप अभिलक्षित तथ्यों के निष्कर्षों को रिट कार्यवाही में पुनः नहीं खोला जाता और न ही उन पर प्रश्न उठाया जाता है। विधि की वह त्रुटि जो अभिलेख के मुख पर प्रत्यक्ष है, रिट द्वारा सुधारी जा सकती है, किन्तु तथ्य संबंधी त्रुटि, चाहे वह कितनी ही गंभीर क्यों न प्रतीत हो, नहीं। अधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यात्मक निष्कर्ष के संबंध में, रिट तब जारी की जा सकती है जब यह प्रदर्शित किया जाए कि उक्त निष्कर्ष अभिलिखित करते समय अधिकरण ने ग्राह्य एवं महत्वपूर्ण साक्ष्य को गलत रूप से अस्वीकार कर

दिया, अथवा अग्राह्य साक्ष्य को गलत रूप से स्वीकार कर लिया, जिसने आक्षेपित निष्कर्ष को प्रभावित किया हो| पुनः, यदि कोई तथ्यात्मक निष्कर्ष किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं है, तो उसे विधि की त्रुटि माना जाएगा, जिसे उत्प्रेषण की रिट द्वारा सुधारा जा सकता है।अधिकरण द्वारा अभिलिखित तथ्यात्मक निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी जा सकती। इस आधार पर कि न्यायाधिकरण के समक्ष प्रस्तुत सुसंगत एवं महत्वपूर्ण साक्ष्य किसी निष्कर्ष को बनाए रखने के लिए अपर्याप्त या अनुपयुक्त हैं, उत्प्रेषण रिट द्वारा सुधार नहीं किया जा सकता। किसी तथ्य संबंधी निष्कर्ष, जो न्यायाधिकरण द्वारा अभिलिखित किया गया है, को चुनौती नहीं दी जा सकती। किसी बिंदु पर प्रस्तुत साक्ष्य की पर्याप्तता अथवा पर्याप्तता का अभाव तथा उक्त निष्कर्ष से निकाले जाने वाले तथ्यात्मक अनुमानों का निर्धारण, अघिकरण के अनन्य अधिकार-क्षेत्र के अंतर्गत आता है। देखिए: सैयद याकूब बनाम के.एस. राधाकृष्णन।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

24. वर्तमान प्रकरण में उच्च न्यायालय ने संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन कर स्वयं का निष्कर्ष निकाला। ऐसा करना उच्च न्यायालय के लिए उचित नहीं था। इस तथ्य से पृथक कि उच्च न्यायालय इस आधार पर तथ्य संबंधी निष्कर्ष को संशोधित नहीं करता कि साक्ष्य पर्याप्त या पर्याप्त नहीं है, वर्तमान प्रकरण में अघिकरण द्वारा विचारित साक्ष्य का परीक्षण उच्च न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष को उचित ठहराने हेतु नहीं किया जा सकता कि कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं था जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि प्रतिवादी ने यात्रा नहीं की। न्यायाधिकरण ने अपने निष्कर्षों के लिए कारण दिए थे। उच्च न्यायालय के लिए यह कहना संभव नहीं है कि कोई भी युक्तिसंगत व्यक्ति इन निष्कर्षों पर नहीं पहुँच सकता था। उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का पुनर्विलोकन किया, उसका पुनर्मूल्यांकन किया और तत्पश्चात उसे साक्ष्य के अभाव के रूप में अस्वीकार कर दिया। यह वही है जो उच्च न्यायालय को उत्प्रेषण रिट जारी करने के अधिकार-क्षेत्र का प्रयोग करते समय नहीं करना चाहिए।

15. विधिक स्थिति भली-भांति स्थापित है कि न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति किसी निर्णय के विरुद्ध निर्देशित नहीं होती, बल्कि यह निर्णय लेने

की प्रक्रिया तक सीमित होती है। न्यायालय निर्णय के गुण-दोष पर विचार नहीं करता। उच्च न्यायालय के लिए यह विकल्प खुला नहीं है कि वह जांच अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन एवं पुनः परीक्षण करे तथा अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए अपने निष्कर्षों तक पहुँचे। वर्तमान प्रकरण में उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का परीक्षण इस प्रकार किया मानो वह अपीलीय न्यायालय हो, जो कि एक गंभीर त्रुटि है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय द्वारा मामले के विचारण में प्रत्यक्ष त्रुटि पाई जाती है और हमारे विचार में इस मामले को विधि के अनुसार पुनर्विचार हेतु उच्च न्यायालय को वापस भेजा जाना आवश्यक है। इस संक्षिप्त आधार पर, हम मामले को उच्च न्यायालय को प्रति प्रेषित करते हैं।

17. रणजीत ठाकुर बनाम भारत संघ एवं अन्य, (1987) 4 SCC 611 में, उच्चतम न्यायालय ने यह अवलोकित किया कि “सामान्यतः न्यायिक पुनर्विलोकन किसी निर्णय के विरुद्ध निर्देशित नहीं होता, बल्कि ‘निर्णय-लेने की प्रक्रिया’ के विरुद्ध निर्देशित होता है।”

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

1. रामाधार भास्कर पूर्वोक्त प्रकरण में तथ्य भिन्न थे। उक्त प्रकरण में अनुशासनिक प्राधिकारी ने जांच प्रतिवेदन से अपनी असहमति स्पष्ट रूप से अभिलिखित की थी तथा आदेश पारित किया था। अतः, उक्त निर्णय वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लागू नहीं होता है।

14. परिणामतः, यह रिट याचिका, आधारहीन होने के कारण, अपास्त किए जाने योग्य है तथा एतद् द्वारा अपास्त की जाती है, इस निर्देश के साथ कि पक्षकार अपने-अपने व्यय स्वयं वहन करेंगे।

हस्ताक्षरित/-

सतीश के. अग्निहोत्री

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं कियाजाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By: Aastha Verma